स्वदेशी

बनाम

बहुराष्ट्रीय शिकंजा

दत्तोपंत ठेंगड़ी

जागृति प्रकाशन, नोएडा-२०१३०१

स्वदेशी

बनाम

बहुराष्ट्रीय शिकंजा

दत्तोपन्त ठेंगड़ी

प्रथम संस्करण : युगाब्द ५०९५

सन् १९९४

जागृति प्रकाशन

एफ- १०९, सैक्टर- २७ नौएडा- २०१३०१

प्रकाशन संख्या ४९ मूल्य : २.००
रुपये

“विदेशी सहायता के द्वारा आर्थिक विकास की बात करना कच्ची मिट्टी का कृत्रिम पांव लगाकर अपनी विकलांगता के समाप्त हो जाने का संतोष पालने या सम्पन्न हो जाने की आत्मप्रवंचना करने जैसा है। देश को जिस आर्थिक साम्राज्यवाद के जाल में फंसाया जा रहा है, अमरीका और दूसरे देश जिस प्रकार अपनी आर्थिक समृद्धि के लिए भारत और अन्य विकासशील देशों का प्रत्यक्ष और परोक्ष शोषण करने की चालाकी कर रहे हैं, यदि समय रहते इसे समझा न गया तो एक दिन देश की राजनीतिक आजादी भी खतरे में पड़ सकती है। तब हम पशुओं की तरह केवल उपभोक्ता होंगे और विदेशियों के गुलाम और बंधुआ मजदूर बनकर रहना ही हमारी नियति होगी। विदेशी आर्थिक साम्राज्यवाद के इस आक्रमण से देश को कोई और नहीं, केवल 'स्वदेशी' का ही कवच बचा सकता है।“

-दत्तोपंत ठेंगड़ी

स्वदेशी बनाम बहुराष्ट्रीय शिकंजा

स्वदेशी एक बहुआयामी विषय है। इसके कई आयामों पर चर्चा हुई है और कई आयाम अभी चर्चा में नहीं आए हैं। यह बहुत विस्तृत विषय है। इस कार्य में सिर्फ प्रचार माध्यमों के सहारे सफल नहीं हुआ जा सकता। इसके लिए प्रत्येक स्तर पर सघन कार्य करने की आवश्यकता है। दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि यदि देश को कोई संदेश देना है तो उसका आरम्भ स्वयं से किया जाए। यही अपनी परम्परा है। अर्थात् हम स्वदेशी का आरम्भ अपने आप से करें, यह सबकी जिम्मेदारी है।

जन- जागरण

पिछले दिनों इस दिशा में जो कार्य हुआ, और अब जो करने का विचार है, उसमें, कुछ अन्तर है। अब तक हम लोगों ने जन-जागरण के माध्यम से प्रशिक्षण देने और स्वदेशी वस्तुओं के बारे में लोगों को बताने का कार्य किया है। अब एक आयाम और हमें इस कार्यक्रम में जोड़ना होगा। वह यह कि थोक वस्तुओं के विक्रेता और क्रेता दोनों से सम्पर्क करके उन्हें स्वदेशी वस्तुएं बेचने और खरीदने के लिए सहमत करना। साथ ही अब उद्योगपतियों पर जोर डालना होगा कि वे अपनी वस्तुओं की उत्पादन-लागत वस्तु पर लिखकर दें। मेरे विचार से इस कार्य में सभी के सहयोग से आगे बढ़ने की आवश्यकता है। और भी कई संस्थाएं इस कार्य में सहयोग करना चाहती हैं। सोचना यह है कि धीरे- धीरे किस प्रकार इन संस्थाओं का सहयोग लिया जा सकता है।

कई बार पूछा जाता है कि राजनीतिक दलों का इसमें क्या सहयोग रहेगा? मेरे विचार से चूँकि यह मामला राष्ट्रीय महत्व का है इसलिए हम सभी राजनीतिक दलों के सभी देशभक्त व्यक्तियों का आव्हान करते हैं कि वे इस कार्य में शामिल हों।

शिक्षण की आवश्यकता

हमने अभी शिक्षण की बात कही। आज जो लोग सुशिक्षित हैं उन्हें शिक्षा देने की आवश्यकता बहुत ज्यादा है। और जो अल्पशिक्षित या अशिक्षित हैं उन्हें राष्ट्रीयता,

संस्कृति और धर्म के परिप्रेक्ष्य में शिक्षित करने की आवश्यकता कम है। चूँकि इस समाज के शिक्षित लोग धरातल से कट कर 'लौह कवच' में रहते हैं, कुछ लोग अभिजात्य कालोनियों में रहते हैं, उनका सम्पर्क जनसाधारण से नहीं होता है। ये लोग पश्चिमी संस्कृति में पले-पढ़े हैं। ऐसे लोगों को सुशिक्षित करना बहुत कठिन है। जहाँ-जहाँ ऐसे लोगों के मन में संदेह उत्पन्न हो सकते हैं, प्रश्न उठ सकते हैं, उन सबका उत्तर समझ लेने की आवश्यकता है। क्योंकि ऐसे लोग ये सारी बातें समझते हुए भी देश- भक्ति से दूर हैं, इसलिए इनको सुशिक्षित करना बहुत कठिन काम है लेकिन यह काम करना पड़ेगा। ऐसे लोगों ने ईमानदार लोगों में भी ऐसा दुष्प्रचार कर रखा है जिसे समझना मुश्किल होता है। ऐसे लोग ही इस तरह की बात करते हैं कि विदेशी कम्पनियाँ कहाँ नहीं होती हैं?

सभी देशों में विदेशी पूँजी-निवेश होता है। इसका विरोध करने वाले घटिया लोग हैं। किन्तु वास्तव में, हम विदेशी कम्पनियों का विरोध नहीं करते। विकसित देशों में जिस तरह से विदेशी पूँजी-निवेश होता है, वैसा ही पूँजी-निवेश हमारे देश में हो तो हमें कोई आपत्ति नहीं होगी। दो देशों के बीच आपसी बातचीत के समय भी राष्ट्रीय-हितों को ध्यान में रखा जाता है, किन्तु हमारे यहाँ तो समझौता करने वालों ने एकदम आत्मसमर्पण कर दिया है।

राष्ट्रीय तकनीक नीति तय हो

कहा जाता है कि हम लोग आधुनिक तकनीक नहीं अपनाना चाहते, भारत को पन्द्रहवीं शती में ले जाना चाहते हैं। यह बिल्कुल गलत आरोप है। हमें विदेशी और आधुनिक तकनीक के आगमन पर कोई आपत्ति नहीं है किन्तु राष्ट्रीय तकनीक नीति तय होनी चाहिए, जिसमें चार बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए-

१. कौन-सी तकनीक हम वैसी की वैसी ला सकते हैं और उसका उपयोग कर सकते हैं।

२. कौन-सी तकनीक हम थोड़े हेर-फेर के साथ उपयोग कर सकते हैं।

३. कौन-सी तकनीक पूरी तरह से निरस्त करनी पड़ेगी।

४. किस क्षेत्र में हमें अपनी तकनीक विकसित करनी चाहिए।

किसी के दबाब में आकर झुकने और राष्ट्रीय हितों का ध्यान रखे बिना समझौतों पर दस्तखत करने की नीति का त्याग करना होगा।

गेट की स्थापना : आर्थिक साम्राज्यवाद के लिए

डंकल के कारण कारन कुछ नये विवाद पैदा हो गए हैं। किन्तु विदेशी आर्थिक साम्राज्यवाद की प्रक्रिया तो १९४५ में ही शुरू हो गयी थी। द्वितीय महायुद्ध के बाद जब सभी आंग्ल देशों को बाध्य होकर अपने उपनिवेशों को स्वतंत्रता देनी पड़ी, तब उन्हें पता चला कि उनकी समृद्धि उनके अपने पैरों पर नहीं बल्कि शोषण के आधार पर खड़ी थी। उन्होंने सोचा कि उपनिवेश अब हमारे हाथ से जा रहे हैं। अब यदि शोषण का कोई और मार्ग नहीं ढूंढेंगे तो हमारी अर्थ-व्यवस्था टूट जाएगी। इस समस्या से निबटने के लिए उन्होंने अन्य देशों का शोषण करने की योजना बनायी। इसमें विश्व बैंक, बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ आदि शामिल थीं। डंकल तब तक इतने प्रत्यक्ष रूप से उसमें शामिल नहीं था, लेकिन यह सही है कि १ जनवरी, १९४८ को गैट की स्थापना हुई थी।

डंकल से पूर्व

१९७३ में अविकसित देशों ने प्रार्थना की कि आपके जितने अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के नियम हैं, वे सब हमारे विरुद्ध जाते है। इसमें जो विषमता निर्माण करने वाले नियम हैं उन्हें बदलना चाहिए। १९८१ में विकसित देशों ने एकत्र होकर कहा कि तुम्हारी बात हम मानने को तैयार नहीं हैं, आज जो व्यवस्था है, वही आगे भी चलती रहेगी। डंकल के आने के बाद पिछले ४ - ५ वर्षों में कुछ तकलीफें और बढी हैं। किन्तु गैट के समय में ये तकलीफें इतनी नहीं थी, तो भी किस तरह से शोषण की प्रक्रिया चल रही थी और विदेशी पूँजी की कार्य शैली और प्रक्रिया क्या है, इसे समझने की आवश्यकता है। हमारे देश में कुछ लोग कहते हैं कि बहुराष्ट्रीय कम्पनियों से गठजोड़ के बाद हमारी कम्पनियाँ उन्नति करेंगी और समृद्धि आ जाएगी। किन्तु इस सम्बंध में हम दो उदाहरण प्रस्तुत करना चाहते हैं। सिंगापुर, हांगकांग व ताइवान का उदाहरण अपने नजदीक के तीन देश हैं- सिंगापुर, हांगकांग और ताइवान। १९८१ में सिंगापुर के अध्यक्ष ने बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का आव्हान किया। उन्हें अपने यहाँ सस्ते मजदूर और सस्ता कच्चा माल उपलब्ध कराया। ध्यान देने योग्य बात है कि इन तीनों देशों में प्रखर राष्ट्र- भक्ति की भावना नहीं थी। और जब समृद्धि आनी शुरू हुई तो सरकारी अधिकारी और नेता

आराम-पसन्द हो गए। कुछ दिन तक आर्थिक समृद्धि रही भी। किन्तु जब बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का झुकाव इनकी ओर से हटकर मलेशिया और इण्डोनेशिया की ओर होने लगा, तब इन देशों को पछतावा होने लगा। क्योंकि तब तक इनकी विज्ञान और तकनीक के क्षेत्र में अपने प्रयोग करने की क्षमता मर चुकी थी। चूंकी देश में मजदूरी महँगी हो गयी थी, उत्पादकता घट गयी थी, इस कारण बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का भी इन देशों से मोहभंग हो गया। अब इन तीनो देशों में खुद को सम्भाल पाने की क्षमता भी नहीं रही है।

कोरिया की दृढ़ता

दूसरा उदाहरण कोरिया का है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने वहाँ भी पूंजी-निवेश करने का प्रस्ताव रखा। किन्तु कोरिया सरकार १९७६ से १९८० तक इस बिन्दु पर सोचती रही कि विदेशी पूँजी-निवेश के प्रति कैसी नीति अपनायी जाय, इसका लाभ कैसे हो सकता है? १९८० में कोरिया ने बहुराष्ट्रीय कम्पनियों से स्पष्ट कह दिया कि हम आपको स्वतंत्रतापूर्वक पूंजीनिवेश करने की अनुमति नहीं दे सकते। जिस क्षेत्र में हम कहेंगे वहाँ यदि आप करने के लिए तैयार हैं तो कीजिए, नहीं तो मत कीजिए। कोरिया ने क्षेत्र छाँट लिए और कहा कि इन-इन क्षेत्रों में आप पूंजी-निवेश कर सकते हैं, और इन-इन क्षेत्रों में आप कदम भी नहीं रख सकते, जैसे कृषि। यह शर्त भी लगायी कि आप जो उद्योग लगाएँगे, उनमें विज्ञान और तकनीक के हर क्षेत्र में हमारे देश के व्यक्तियों को शामिल करना होगा, ताकि आपके जाने के बाद भी हमारे उद्योग भली भांति चल सकें। कोरिया ने दृढ़तापूर्वक ये बातें कहीं और बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को उसकी बातें माननी पड़ी।

अनुदान से तीन गुणा ब्याज राशि

हमारे देश में कुछ लोगों का मत है कि अनुदान के रूप में जो पैसा हमारे पास आता है वह विशुद्ध हमारे हाथ में आने वाली चीज है। यह अर्द्ध-सत्य है। समाचार पत्र भी अर्द्ध-सत्य ही प्रकाशित करते हैं। एक उदाहरण देखिए- १९९१ में विकसित देशों की ओर से विकासशील देशों की ओर ४९ बिलियन डॉलर का अनुदान भेजा गया। समचार-पत्रों ने यह समाचार तो प्रकाशित किया; किन्तु यह नहीं बताया कि उसी दौरान ब्याज आदि के रूप में १४७ बिलियन डॉलर विकासशील देशों की ओर से विकसित देशों की ओर गया।

४९ बिलियन डॉलर आया और १४७ बिलियन डॉलर गया अर्थात् ९८ बिलियन डॉलर विकासशील देशों से विकसित देशों की ओर गया। यह बात समाचार-पत्रों ने नहीं प्रकाशित की।

फिलीपीन्स का उदाहरण

एक उदाहरण फिलीपीन्स का भी है जिसे हम लोगों को ध्यान में रखना चाहिए। वहाँ के राष्ट्रपति मार्कोस ने नाभिकीय संयंत्र लगाने के नाम पर २ बिलियन डॉलर का विदेशी कर्ज लिया। संयंत्र के निर्माण का समय आया तो निविदाएं आमंत्रित की गयीं; किन्तु बुलाया उन्हीं को जो मार्कोस के अपने लोग थे। फिर ८५ मिलियन डॉलर का चेक मार्कोस की जेब में से ठेकेदार की जेब में आ गया। धीरे- धीरे वही ८५ मिलियन डॉलर का चैक ठेकेदार की जेब से मार्कोस की जेब में आ गया फलस्वरूप नाभिकीय संयंत्र का निर्माण हुआ ही नहीं और प्रतिदिन ३ लाख ५५ हजार डॉलर का ब्याज इस राशि पर फिलीपीन्स को अदा करना पड़ा।

बाद में जब मार्कोस को हटाया गया और एक्विनों आयी तो उन्होंने वैज्ञानिकों को बुलाकर संयंत्र के बारे में विचार-विमर्श किया। वैज्ञानिकों ने कहा कि यह भूचाल-बहुल क्षेत्र है। यहाँ इस प्रकार के संयंत्र लगाने का कोई औचित्य ही नहीं है। वैज्ञानिकों की इस राय के बाद एक्विनो ने संयंत्र लगाने का विचार तो त्याग ही दिया, साथ ही कर्जदाता देश से स्पष्ट कह दिया कि हम कोई कर्ज या ब्याज अदा नहीं करेंगे। यह कर्ज मार्कोस ने लिया था। इसका एक पैसा विकास पर नहीं खर्च हुआ। इसलिए इसे मार्कोस-परिवार से ही वसूला जाय।

आज यही हाल हमारे देश का भी है। विदेशी कर्ज का बहुत भाग खर्च हो रहा है। इसमें से देश के विकास पर कितना खर्च हो रहा है यह देखने का समय है। यह अर्द्ध-सत्य असत्य से भी ज्यादा खतरनाक है। इसका अनुभव अनेक स्थानों पर हमें आ सकता है।

शिवाजी की नीति

लोग कहते हैं कि अर्थशास्त्र और अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार नया विषय है। किन्तु डॉ. मा. गो. बोकरे ने अपनी पुस्तक 'हिन्दू इकानॉमिक्स' में लिखा है कि यह कोई नया विषय नहीं है। यह वेदकाल में भी था और विदुर नीति में इसका विश्लेषण किया गया है। लोग इसका किस प्रकार पालन करते थे उसका भी एक उदाहरण देखिए:

शिवाजी के समय में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार बहुत जोर-शोर से चल रहा था। अनेक विदेशी व्यापारी यहाँ आते थे और अलग-अलग राज्यों में अपना व्यापार करते थे। उस काल का वर्णन करते हुए एक पत्र प्रकाशित हुआ है जिसमें एक व्यापारी ने लिखा है कि- इस देश के बाकी जो सत्ताधारी हैं, वे तो सज्जन हैं। वे तो सब हमारा सीधा संबंध हमारे ग्राहकों से आने देते हैं। उन्हें हम अपना माल बेचते है और सीधा दाम वसूलते हैं। लेकिन यहाँ एक ही शासक (शिवाजी) ऐसा है जो अपने प्रजाजनों के साथ मेरा सीधा सम्बन्ध आने ही नहीं देता। वह पहले यह जानकारी लेता है कि उसके राज्य की आवश्यकताएँ क्या हैं। फिर हमसे बातचीत करता है। बातचीत भी वह स्वयं करता है, किसी और को नहीं करने देता। मामला तय हो जाने के बाद शिवाजी रुपयों में कभी हमको दाम नहीं चुकाता, बल्कि उतनी ही कीमत का नारियल और सुपारी हमें खरीदने को कहता है, और उस नारियल और सुपारी का दाम भी खुद तय करता है।'

यह था हमारे यहां का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार।

अमरीकी साम्राज्यवादी ढाँचे का अंत २०१० से पहले

हमारी सरकार कहती है कि हम डंकल प्रस्ताव पर हस्ताक्षर नहीं करेंगे तो विश्व में अकेले पड़ जाएँगे। वास्तव में हमारे देश का यह विचार कि अमरीका सर्वशक्तिमान देश है, एकदम गलत है। बहुत बड़ा कर्ज अमरीका पर है, बहुत बेरोजगारी बढ़ रही है वहाँ, और भी तमाम समस्याओं से वह घिरा हुआ है। हमारे शोषण की यह प्रक्रिया जिस अमरीका की ओर से शुरू है वह स्वयं आज पतन की ओर अग्रसर है। और हमें विश्वास है कि ईस्वी सन् २०१० से पहले ही अमरीका का यह साम्राज्यवादी ढाँचा ध्वस्त हो जाएगा।

भारत : सुप्त सिंह

हमारे सामने कोई निराशाजनक स्थिति आज भी नहीं है। हमारे पास सब है, जनशक्ति है, साधन है। सब कुछ है; बस इच्छाशक्ति नहीं है। यदि राष्ट्रीय इच्छाशक्ति इस स्वदेशी जागरण मंच के प्रयासों से जागृत हो जाती है तो ऐसा दिखेगा कि यह एक सोया हुआ शेर था। लोगों ने सारी व्यवस्था की थी कि भारत नाम का या हिन्दू नाम का जो शेर है कभी जागृत न हो; लेकिन यदि यह जाग जाता है तो इन सारे लोगों को हमारे सामने

झुकना पड़ेगा। ताकत उनकी नहीं है, ताकत हमारी है। इतना ही है कि हम सोए हुए हैं। जागृत होने का काम हम आने वाले समय में पूरी ताकत से करें, यही अपना लक्ष्य है।

स्वदेशी पर विभिन्न विचार

अँग्रेज जिसे राष्ट्रीयता या देशभक्ति कहते हैं, उसी भावना को हम स्वदेशी की संज्ञा प्रदान करते हैं।

-लोकमान्य तिलक

स्वदेशीवाद अपने उच्चतम रूप में केवल एक औद्योगिक और आर्थिक आंदोलन ही नहीं है, वह राष्ट्र के सम्पूर्ण जीवन की अभिव्यक्ति है, उसे प्रमाणित करता है। स्वदेशी गम्भीर है, भावपूर्ण है, उत्साहपूर्ण व्यापक देश-प्रेम है, और यह देश-प्रेम अपने को सभी क्षेत्रों में ही नहीं, सम्पूर्ण मानव को आक्रान्त करता है और तब तक चैन न लेगा, जब तक कि सम्पूर्ण मानव का उद्धार न कर दे।

-गोपाल कृष्ण गोखले

सर्वशक्तिमान जगदीश्वर को साक्षी मानकर भावी पीढ़ी के सम्मुख हम यह प्रतिज्ञा करते हैं कि जहां तक हो सकेगा, हम अपने देश में बनी वस्तुओं का ही प्रयोग करेंगे, विदेशी वस्तुओं को प्रयोग में नहीं लायेंगे। भगवान इस कार्य में हमारी सहायता करे।

(स्वदेशी प्रतिज्ञा)

स्वदेशी शासन प्रकृति की व्यवस्था है, विधि का विधान है। प्रकृति ने अपनी पुस्तकों में अपने हाथों से यह सर्वोपरि व्यवस्था लिख रखी है। प्रत्येक राष्ट्र को अपने भाग्य का आप ही निर्माता होना चाहिये।

-सुरेन्द्रनाथ बनर्जी (१८८६, कलकत्ता अधिवेशन)

स्वदेशी का व्रत एक पुनीत कार्य है, जिससे केवल अपना ही नहीं, सबका भला होगा। जिस प्रकार लालटेन अंधकार को हटाकर प्रकाश फैलाती है, उसी प्रकार स्वदेशी का व्रत, दुःख और दरिद्रता को दूर हटाकर सुख का प्रसार करता है। मैं गत ५६ वर्षों से स्वदेशी का उपयोग कर रहा हूं। स्वदेशी व्रत से देश के सभी लोग सुखी होंगे, देश का

धन देश में रहेगा। परमात्मा आप सबको अपनी शक्ति के साथ-साथ देशभक्ति भी प्रदान करे।

-मदन मोहन मालवीय

(१९३४, स्वदेशी प्रदर्शनी, कालपी, उ० प्र०)

स्वदेशी तथा कृषि की उपेक्षा, जो स्वतंत्रता के बाद हमारी सरकार की आर्थिक नीति का अंग रही है, उसने हमें वर्तमान आर्थिक एवं वित्तीय संकट में डाल दिया है दुर्भाग्यवश हमारा यह अनुभव रहा है कि कांग्रेस सरकार फ्रांस के बारवान्स की तरह न कुछ सीखती है और न कुछ भूलती है। खैर, हमें यह आशा -करनी चाहिए कि भविष्य, भूतकाल की तरह नहीं होगा और 'स्वदेशी' की भावना देश भर में फैल जायेगी, जैसा कि स्वतंत्रता के पूर्व के दिनों में गांधी के नेतृत्व में हुआ था। 'स्वदेशी ' का विचार गीता के 'स्वधर्म' वाले विचार से प्राय: पूर्ण एकत्व रखता है। स्वधर्म स्वभाव पर आधारित है अर्थात् किसी भी मूलगागी प्रवृत्ति के लोगों को जीवन में वही धर्म अपनाना चाहिए जो इस प्रकृति के विरुद्ध न हो।

- आचार्य कृपलानी

स्वदेशी के बिना न स्वराज्य सार्थक होगा, न ही देश की गरीबी दूर होगी और न समाजवादी समाज की रचना ही की जा सकेगी.

-डॉ० राममनोहर लोहिया

'स्वदेशी', स्वदेश प्रेम और देश- भक्ति का आविष्कार है। 'स्वदेशी' स्वदेश को विश्व से अलग- थलग नहीं करती, अपितु विश्व के साथ-साथ चलने की सामर्थ्य प्रदान करती है।

-माधव सदाशिव गोलवलकर

(लखनऊ के बुद्धिजीवियों के बीच एक अनौपचारिक वार्ता में, १९६५)

'स्वदेशी' की कल्पना बीते युग तथा प्रतिगामीपन की द्योतक समझी जाती है। विदेशों की हर वस्तु हम बड़े चाव से ले रहे हैं। विचार, व्यवस्था, पद्धति, पूँजी, उत्पादन प्रणाली,

प्रौद्यौगिकी तथा उपभोग के मानदण्ड सभी क्षेत्रों में हम विदेशों पर निर्भर होते जा रहे हैं। यह प्रगति का रास्ता नहीं है। इससे विकास नहीं होगा। हम अपने 'स्व' को विस्मृत कर परतंत्र हो जायेंगे। 'स्वदेशी' के भावात्मक रूप को समझकर हमें उसे सृजन का आधार एवं अवलम्ब बनाना चाहिए, विदेशी पूंजी के साथ ही हमें विवश होकर विदेशों की उत्पादन प्रणाली भी स्वीकार करनी पड़ती है। हमारे देश में आने वाले विदेशी पूंजीपति और विशेषज्ञ उनके अपने देश में प्रचलित उत्पादन-पद्धति के अनुसार और उपलब्ध यंत्र सामग्री की सहायता से यहां उत्पादन प्रारम्भ करते हैं। इससे हमारा देश औद्योगीकरण के मार्ग पर चार पग आगे तो बढ़ जायेगा, किन्तु गहरी जड़ों वाले विकासोन्मुख एवं व्यापक औद्यौगीकिरण की नींव कदापि-नहीं रखी जा सकती। अर्थव्यवस्था कैसी हो? ऐसी कि जिसके कारण मनुष्यत्व का विकास होगा। वह नष्ट नहीं होगा अर्थात् जिसकी सहायता से हम मानवत्व से देवत्व की ओर जा सकें। यह लक्ष्य सम्मुख रखकर नियोजन, नियमन, नियंत्रण और आर्थिक संस्थाओं का निर्माण करना चाहिये। इसके लिए अर्थव्यवस्था की सीमाएं क्या हों, खोजना चाहिए। यदि हम यह खोज शुरू करेंगे तो इसके एकमेव आधार के रूप में हमें 'स्वदेशी' को ही अपनाना होगा।.. विदेशी सहायता का धंधा परावलम्बन का फंदा है। हम विदेशों के हाथों में न खेलें। स्वदेशी की भावना का आव्हान कर आर्थिक संकट का सामना करें। विदेशी सहायता की बैसाखियों को फैंक देने से ही भारत प्रगति कर सकेगा। विदेशी सहायता के कारण हमारी आदतें खराब हो गई हैं। हमने स्वदेशी का महामंत्र भुला दिया है। हम उसे भुला दें, यही विदेशी योजना है, यह घातक है।

-पंडित दीनदयाल उपाध्याय

आज डालर की प्राप्ति के लिए हम पागल हो गए हैं, मानो डालर ही हमारा परमेश्वर बन गया है। उसे प्राप्त करने के लिए हमने अपने धर्म और नीति की ओर से भी पीठ फेर ली है। डालर प्राप्त करने के लिए न केवल बन्दर तथा मेंढक जैसे प्राणियों को, बल्कि जिस गाय को हम पवित्र मानते हैं, उसे भी मारकर विदेशों में भेज रहे हैं। इस प्रकार मिले हुए डालरों से हम विदेशों से दूध के डिब्बे (बेबी फूटन) मंगा रहे हैं। गोमांस के निर्यात से अर्जित डालरों से हम विदेशों से रासायनिक खाद मंगा रहे हैं।

आर्थिक प्रगति के जो प्रचलित मापदण्ड हैं, वे गलत है। विदेशी व्यापार के मापदण्ड भी हमें भ्रमित करने वाले हैं। जब तक आम आदमी की प्राथमिक आवश्यकताएं पूरी नहीं होतीं तब तक प्रगति का आभास देने वाली योजनाएं निरर्थक हैं। सर पर बालों की जुल्फें बढ़ाने मात्र से किसी व्यक्ति का स्वास्थ्य अच्छा है, यह नहीं कहा जा सकता।

स्वदेशी और स्वावलम्बन अन्योन्याश्रित हैं। राष्ट्र को स्वावलम्बी बनाये बिना न हम राजनीतिक स्वतंत्रता का संरक्षण कर सकते है और न संप्रभुता को ही कायम रख सकते हैं। स्वावलम्बन के लिए स्वदेशी की भावना का जगाना जरूरी है। देश में यह संकल्प जागृत होना चाहिए कि हम अपने पुरुषार्थ से, अपने जन-बल और भौतिक साधनों से राष्ट्र को समृद्ध और शक्तिशाली बनाकर दिखाएंगे। कोई देश विदेशों की दया पर अपने भविष्य का निर्माण नहीं कर सकता।

-पंडित दीनदयाल उपाध्याय

'स्वदेशी व स्वावलम्बन'। उन्होंने स्वदेशी को महामंत्र की संज्ञा दी थी और देशवासियों से उसे कभी न विस्मृत करने के लिए कहा था। उनका कहना था कि विदेशी शक्तियां चाहती हैं कि हम स्वदेशी के महामंत्र को भूल जाएं। उनका यह भी कहना था कि भारत में आर्थिक प्रश्न इसलिए नहीं उलझ रहे है कि हमें विदेशी सहायता कम मिल रही है, अपितु उनके उलझने का एक कारण यह भी है कि हमें विदेशी सहायता आवश्यकता से अधिक प्राप्त हो रही है। उन्होंने एक स्थान पर कहा था कि 'अन्य देश अपनी आन्तरिक समस्याओं, जैसे मंदी तथा बेकारी को दूर करने के लिए कभी-कभी दूसरे देशों को सहायता देने की नीति अपनाते हैं। इससे सावधान रहने की आवश्यकता है।' इसका अर्थ यह नहीं है कि वे विदेशी सहायता के सिद्धान्तत: विरोधी थे, किन्तु उनका यह आग्रह अवश्य था कि हम नितान्त आवश्यक होने पर ही विदेशी सहायता लें और जितनी आवश्यक हो, उतनी ही सहायता लें। जहां तक संभव हो, सहायता बिना शर्त होनी चाहिए।

-अटल बिहारी वाजपेयी

(१९६८, 'समग्र दृष्टि' स्मारिका में लेख)

लेजर टाईपसैटिंग - पूजा लेजर प्रिन्टर्स, सुभाष पार्क विस्तार, दिल्ली- ३२
मुद्रक - भारत मुद्रणालय १/११८३५ पंचशील गार्डन, नवीन शाहदरा, दिल्ली- ३२

जागृति प्रकाशन

एफ - १०९, सैक्टर - २७, नौएडा - २०१३०१